संगीतिक अभिरुचि और संगीतिक निपुणता

डॉ० श्रुति होरा
एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत विभाग
पी०जी०जी०सी०जी०, सेक्टर–11, चण्डीगढ़
ईमेलः dharmji75@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ० श्रुति होरा

संगीतिक अभिरुचि और संगीतिक निपुणता

Artistic Narration 2021, Vol. XII, No. 2, Article No. 30 pp. 195-200

https://anubooks.com/artistic-narration-no-xii-no-2-july-dec.-2021/

सारांश

संगीतिक मूल योग्यताओं से तात्पर्य यह है कि व्यक्ति में जन्मत कुछ संगीतिक योग्यताएं होती है जो कि बिना किसी प्रशिक्षण के उसमें विद्यमान रहती है सांगीतिक योग्यता से तात्पर्य संगीत सम्बन्धी बहुत सी योग्यताओं से होता है जैसे कि सांगीतिक सामान्य ज्ञान, सांगीतिक चिन्हज्ञान, स्वरलिपी, तारता विभेद, तीव्रता विभेद, नाद की जाति अथवा गुण स्वर समृति, लय, राग पहचानना, पुनरूत्पादन आदि। संगीत की अर्जित योग्यताओं का अर्थ उन योग्यताओं से है जो प्रशिक्षण के माध्यम से या अपने प्रयत्नों द्वारा या अन्य किसी माध्यम से कोई भी व्यक्ति अर्जित करता है। जैसे स्वरलिपि की योग्यता राग पहचानने की योग्यता आदि ऐसी सांगीतिक योग्यताएं है संगीतिक योग्यता चाहे वंश परम्परा से मिली है किन्तु यदि अनुकूल वातावरण न दिया जाए तो उसकी वह योग्यता विकसित नही हो पाएगी क्योंकि बच्चे की सांगीतिक रूचि का सीधा सम्बन्ध सांगीतिक वातावरण से जुडा हुआ है। वंशानुकूल की दृष्टि से संगीतज्ञों की जीवनियों पर किए गए अध्ययन भी वातावरण के महत्व को बढावा देने का समर्थन करते है न कि सांगीतिक योग्यता पूर्णतः वंशानुगत है। बालक के सांगीतिक रूझान का सीधा सम्बन्ध सांगीतिक वातावरण से जुडा हुआ है और वातावरण से ही सांगीतिक योग्यता विकसित होती है। जिस व्यक्ति को सांगीतिक वंश परम्परा व अनुकूल वातावरण दोनों मिलते है तो वह उच्च कोटि का संगीतज्ञ बन सकता है।

योग्यता शब्द का अर्थ

सामान्यता योग्यता शब्द का अर्थ बहुत विस्तृत अर्थ में लिया जाता है। किसी भी व्यक्ति से यदि पूछा जाए कि उसकी योग्यता क्या है ? तो वह उसका प्रत्युतर स्वयं के द्वारा प्राप्त की गई योग्यताओं के सम्बन्ध में ही देता है। जैसे वह B.A. है L.L.B. है आदि। इसका अर्थ यह हुआ कि व्यक्ति प्रायः योग्यता से ही लेते है किन्तु अर्जित योग्यता के अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ अन्य योग्यता भी होती है जो कि उसे जन्म से ही प्राप्त होती है। ऐसी योग्यताओं को हम मूल योग्यताओं के अन्तर्गत मानते है। इन मूल योग्यताओं को व्यक्ति विकसित कर पाता है या नहीं। यह एक निर्विवाद सत्य है कि व्यक्ति में कुछ मूल योग्यताएं होती है और कुछ अर्जित।

संगीतिक मूल योग्यता का अर्थ

संगीतिक मूल योग्यताओं से तात्पर्य यह है कि व्यक्ति में जन्मत कुछ संगीतिक योग्यताएं होती है जो कि बिना किसी प्रशिक्षण के उसमें विद्यमान रहती है जैसे कोई ध्वनि ऊँची है या नीची है जोर से है या धीमे है। वह ध्वनि किस व्यक्ति में स्वतः ही होती है। इन्हीं योग्यताओं को सांगीतिक भाषा में क्रमशः तारता विभेद, तीव्रता विभेद व नाद की जाति अथवा गुण पहचानने की योग्यता कहा जाता है। यद्यपि इन योग्यताओं को प्रशिक्षण के माध्यम से और अधिक विकसित व परिष्कृत किया जा सकता है परन्तु ये योग्यताएं व्यक्ति की मूल योग्यताओं के अन्तर्गत ही आती है।

सांगीतिक अर्जित योग्यता का अर्थ

संगीत की अर्जित योग्यताओं का अर्थ उन योग्यताओं से है जो प्रशिक्षण के माध्यम से या अपने प्रयत्नों द्वारा या अन्य किसी माध्यम से कोई भी व्यक्ति अर्जित करता है। जैसे स्वरलिपि की योग्यता राग पहचानने की योग्यता आदि ऐसी सांगीतिक योग्यताएं है जो कि व्यक्ति में जन्मतः विद्यमान नही हो सकती। इन योग्यताओं को वह सीखने के पश्चात् ही प्राप्त कर सकता है। प्रस्तुत सांगीतिक योग्यता, सांगीतिक चिन्ह् ज्ञान की योग्यता, राग पहचानने की योग्यता व पुनरूत्पादन की योग्यताओं को संगीत की अर्जित योग्यताओं के अन्तर्गत माना है।

सांगीतिक योग्यता का अर्थ किसी एक योग्यता से नही

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि सांगीतिक योग्यता का अर्थ किसी एक योग्यता से नहीं है जैसे कि किसी में लय सम्बन्धी योग्यता है तो इसका अर्थ यह नहीं होगा कि उसमें सांगीतिक योग्यता है तो इसका अर्थ यह नही होगा कि उसमें सांगीतिक योग्यता है वरण यह होगा कि उसमें केवल लय सम्बन्धी योग्यता है। सांगीतिक योग्यता से तात्पर्य संगीत सम्बन्धी बहुत सी योग्यताओं से होता है जैसे कि सांगीतिक सामान्य ज्ञान, सांगीतिक चिन्ह ज्ञान, स्वरलिपी, तारता विभेद, तीव्रता विभेद, नाद की जाति अथवा गुण स्वर समृति, लय, राग पहचानना, पुनरूत्पादन आदि।

संगीत को उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए उपरोक्त योग्यताओं का होना आवश्यक है और यह सभी योग्यताएं जब किसी विद्यार्थी में उच्च शिक्षा के लिए सांगीतिक योग्यता मानी जाएगी।

सांगीतिक योग्यता में वंशानुगत व वातावरण की भूमिका के विषय में सभी विद्धानों में मतभेद है। कई विद्धान सांगीतिक योग्यता को पूर्णतः वंशानुगत मानते है जबकि अन्य कुछ विद्धान सांगीतिक योग्यता को वातावरण की देन बताते है व कुछ विद्धान दोनो का ही सापेक्ष योगदान मानते है।

वंशानुंगत सांगीतिक योग्यता

सांगीतिक योग्यता को वंशानुगत मानने वाले विद्धान इस योग्यता को जन्मजात मानते है। उनका कथन है कि इस पर वातावरण का कोई प्रभाव नही पड सकता। ऐसे विद्धान संगीतज्ञों के परिवारों के अध्ययन के आधार पर अपने कथन की पुष्टि करते है।

वातानुकुल योग्यता

दूसरी ओर सांगीतिक योग्यता पर वातावरण का अधिक महत्व बताने वाले विद्धानों का कथन है कि बालक के सांगीतिक रूझान का सीधा सम्बन्ध सांगीतिक वातावरण से जुडा हुआ है और वातावरण से ही सांगीतिक योग्यता विकसित होती है।

एक वर्ष में माता पिता व उनके बालकों, दादा–दादी व पोते–पोती में खून का सम्बन्ध विशेष रूप से देखा जा सकता है और इसी से उसमें समान गुण भी पाये जाते है। यह पारिवरिक समानता केवल शारिरिक रूप से ही सीमित नही होती बल्कि मानसिक गुणों में भी होती है जैसे– स्वभाव, बुद्धि, प्रतिभा, व व्यक्तित्व के गुणों में एक वर्ष के लोगों में समानता पायी जाती है। वस्तुतः वंश परम्परा के द्वारा ही छिपे हुए सम्मान गुण व योग्यता अगली पीढियों में स्थानान्तरित होते है। इस सिद्धान्त के आधार पर विद्धानों में सांगीतिक योग्यता को वंशानुगत माना है जैसा कि भनतेज के अनुसार– जब माता पिता दोनो सांगीतिक होते है तो उनके सभी बालको में सांगीतिकता पाई जाती है और जब दोनों में से कोई भी सांगीतिक नही होता है तो उनके कुछ बालक ही सांगीतिक पाये जाते है अथवा कोई भी बालक नही होता है। यदि माता–पिता दोनो में से कोई एक सांगीतिक है तो उनका कोई भी बालक सांगीतिक नही होगा या उनके बालको में 50 प्रतिशत सांगीतिकता होगी। Golton ने 300 परिवारों के 997 व्यक्तियों पर अपने प्रशिक्षण करके यह बताया कि सांगीतिक गुण एक के बाद एक परिवारों में आता है। इससे यह सिद्ध होता है कि सांगीतिक नाते भी वंशानुगन होती है।

Amram Scheunfild ने अपनी पुस्तक You and Her duty के प्रथम संस्करण में अपने अध्ययन से यह बताया है कि माता–पिता दोनों जब प्रतिभावान होते है तो उनके बच्चों में 70 प्रतिशत सांगीतिक प्रतिभा होती है। जहाँ माता पिता दोनों में से एक सांगीतिक प्रतिभा रखता है तो उनके बच्चों में 60 प्रतिशत सांगीतिक प्रतिभा होती है और जहा माता पिता दोनों में से कोई भी सांगीतिक प्रतिभा नही रखता वहां उनके बच्चों में 15 प्रतिशत ही सांगीतिक प्रतिभा होती है।

संगीतिक योग्यता चाहे वंश परम्परा से मिली है किन्तु यदि अनुकूल वातावरण न दिया जाए तो उसकी वह योग्यता विकसित नही हो पाएगी क्योंकि बच्चे की सांगीतिक रूचि का सीधा सम्बन्ध सांगीतिक वातावरण से जुडा हुआ है। वंशानुकूल की दृष्टि से संगीतज्ञों की जीवनियों पर किए गए अध्ययन भी वातावरण के महत्व को बढावा देने का समर्थन करते है न कि सांगीतिक योग्यता पूर्णतः वंशानुगत है। इस सिद्धान्त का अर्थात् Reynold का मानना है कि जिस सांगीतिक योग्यता वंशानुगत प्राप्त हुई है उसे वातावरण तो घर में स्वतः ही प्राप्त होता है इसलिए सांगीतिक योग्यता पर साकारात्मक रूप से वातावरण का प्रभाव पडता है। यदि सांगीतिक योग्यता में वंशानुगत व वातावरण को समान रूप से नही माना जाए तो किसी निष्कर्ष पर नही पहुँचा जा सकता यदि किसी में सांगीतिक योग्यता जन्मतः है फिर भी उसे विकसित करने के लिए अनुकूल वातावरण अनिवार्य है। वस्तुतः सांगीतिक योग्यता में वंश परम्परा व वातावरण दोनों का सापेक्ष महत्व है। अतः जिस व्यक्ति को सांगीतिक वंश परम्परा व अनुकूल वातावरण दोनों मिलते है तो वह उच्च कोटि का संगीतज्ञ बन सकता है।

उनको विकसित किया जाए, कैसे एक रूप में अनेक रूपों का समन्वय किया जाए कि उसकी मौलिकता नष्ट न हो सके। कैसे विभिन्न तथ्यों का एकीकरण करके उनमें अनुरूपता लाई जाए, कैसे उसके विभिन्न रूपों को एक सूत्र में पिरोया जाए किस प्रकार प्राचीन और नवीन पद्धतियों व शैलियों को आधुनिक सांचे में ढालकर उनकी अभिवृद्धि की जाए और किस प्रकार नए राग, नई बन्दिशें और नई कल्पनाओं को जनम दिया जाए–आदि अनेक समस्याएं है। इन समस्याओं को वहीं संगीतज्ञ सुन्दर ढंग से सुलझा सकता है जिसने मूल तत्वों का भली–भांति अध्ययन किया हो और उसका अनुकूल आचरण भी करता है। इनसे सम्बन्धित अच्छी पुस्तकों को खोजकर पढना सांगीतिक योग्यता, रूचि एवं प्रतिभा को चार चाँद लगा देता है तथा सांगीतिक ज्ञान की मात्रा बढती है।

गोष्ठियों का महत्व

सांगीतिक जीवन को प्रतिभाशाली एवं गौरवपूर्ण बनाने के लिए गोष्ठियों का अपना मूल्य है। गोष्ठियों के अवसर पर अनेक कलाकारों का मिलन होता है, विचार विमर्श होता है और कला का परस्पर आदान–प्रदान होता है और संगीतकारों के वातावरण में एक नूतन चेतना का सृजन हो जाता है जो कि उनके विकास का प्रतीक बनती है। यदि इनमें संगीतज्ञ भाग नहीं लेते तो सांगीतिक ज्ञान की परिधि सीमित रह जाएगी। यह उनके विकास का प्रकाशदीप है। संगीतकार के विशाल जीवन में गोष्ठियां लहरों के समान है जो उसके जीवन में प्रवाह लाती रहती है। बिना प्रवाह के जीवन का क्या मूल्य ? प्रवाहपूर्ण जीवन ही जीवन है। इन गोष्ठियों को संगीतकारों के जीवन का मार्गचिन्ह भी कह सकते है, क्योंकि यही से उनकों अपनी कला के सन्तुलन का सही पता चलता है। यह उनकी कला कसौटी पर चढ़ाई जाती है। कसौटी पर चढने के बाद ही कला की स्थिति का पता चलता है और सही दिशा का ज्ञान होता है तथा मौलिक सम्भाव

भी मिल सकते है। अतः हम कहते वंश परम्परा यद्यपि आघात है किन्तु वह विकसित योग्यता तब तक नही बन सकती जब तक अनुकूल वातावरण न मिले। सांगीतिक योग्यता एवं रूचि दोनों सफल संगीतज्ञ के लिए अति आवश्यक है।

संगीत की उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए संगीत की मूल योग्यता व अर्जित योग्यता को आवश्यक मानते हुए हमने सांगीतिक योग्यता के लिए निम्नलिखित दस योग्यताएं मानी जाती हैः–

1. संगीत सामान्य ज्ञान
2. सांगीतिक चिन्ह ज्ञान
3. स्वर लिपी
4. तारता विभेद
5. तीव्रता विभेद
6. नाद की जाति एवं गुण
7. स्वर स्मृति
8. लय
9. राग पहचानना
10. पुर्नरूत्पादक

उपर्युक्त 10 योग्यताओं में से तारता विभेद, तीव्रता विभेद व नाद की जाति एवं गुण की योग्यता को संगीत की मूल योग्यता के अन्तर्गत माना है और इन तीनों योग्यताओं की परख करने पर भी ये परीक्षण सांगीतिक मूल योग्यता के परीक्षण ही सिद्व हुए है। शेष सात परीक्षणों को संगीत की अर्जित योग्यता के अन्तर्गत माना है। यह सभी योग्यताएं जब किसी विद्यार्थी में निश्चित परिमाण में पार जाएगी तभी उसमें संगीत की उच्च शिक्षा प्राप्त करने की योग्यता मानी जाएगी।

गुरू शिष्य परम्परा

प्राचीन काल से ही विश्व के प्रायः सभी देशों में संगीत में किसी न किसी रूप में सांगीतिक योग्यता परीक्षण विद्यमान रहे है। भारतीय संगीत की प्राचीन गुरू–शिष्य परम्परा में भी गुरू अपने शिष्य बनाने से पूर्व एक प्रकार का सांगीतिक योग्यता परीक्षण करते थे जिसने वह मुख्य रूप से यह देखते थे कि शिष्य में संगीत के संस्कार स्वर ज्ञान, लय ज्ञान, सांगीतिक स्मृति जैसे संगीत के आधारभूत गुण था। संगीत की प्रतिभा है अथवा नहीं इसके पश्चात् ही वह किसी को अपना शिष्य बनाते थे। भारतीय संगीत में अनेकानेक ऐसे उदाहरण देखे जा सकते है प्रसिद्ध संगीतज्ञ तानसेन में भी सांगीतिक प्रतिभा को देखकर ही स्वामी हरीदास जी ने उन्हें अपना शिष्य बनाया था। धीरे–धीरे सांगीतिक योग्यता परिक्षणों का विकास हुआ और वर्तमान समय में सांगीतिक योग्यता का मापन वैज्ञानिक पद्वति के आधार पर किया जा रहा है। इसके सांगीतिक योग्यता परीक्षण बैटरी निर्मित हो रही है। किन्तु भारत में ऐसे सांगीतिक योग्यता

परिक्षण की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है। जबकि पाश्चात्य संगीत में योग्यता परिक्षणों को एक आवश्यक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। पाश्चात्य संगीत का विकास समूह में हुआ है अर्थात् पाश्चात्य संगीत व्यक्ति प्रधान न होकर समूह प्रधान रहा है। किन्तु फिर भी संगीत शिक्षक विद्यार्थी में संगीत के कुछ विशिष्ट गुण या योग्यता के परीक्षण के पश्चात् ही उसे संगीत का शिक्षण देते है।

सांगीतिक योग्यता के साथ संगीत के शास्त्रीय लय का ज्ञान आवश्यक है

सांगीतिक योग्यता एवं प्रतिभा के साथ–साथ संगीत का पूर्ण रूपण शास्त्रीय ज्ञान एक कुशल संगीतज्ञ बनाने में सहायक होता है। व्यवहारिक ज्ञान का विकास शास्त्रीय ज्ञान पर ही आधारित है। विधिवत अध्ययन के बिना सांगीतिक प्रतिभा भी अधूरी रह जाती है। अध्ययन करते समय अपना दृष्टिकोण उदार एवं विशाल बनाना चाहिए। प्रायः कई बार देखा जाता है कि कई बार मनुष्य में सांगीतिक प्रतिभा, योग्यता और सुन्दर अलम्य अनुभव है, किन्तु वह उन अनुभवों को प्रस्तुत करने की कला से पूर्ण अनभिज्ञ होते है इसलिए वह संगीत को शास्वत नही बना पाते और न ही लोकप्रिय ही बना पाते है। संगीत को किस प्रकार गुलदस्ते के समान काट–छांट कर दुरूस्त किया जाए, कैसे खटके और मुर्की का प्रयोग अधिकतर ठुमरी, दादरा, टप्पा आदि में सुनने का मिलता है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. गर्ग, लक्ष्मी नारायण–निबन्ध संगीत
2. रंधावा मोहिन्दर सिंह– कांगड़े दे लोकगीत
3. हिन्दी साहित्य कोष– धीरेन्द्र वर्मा
4. मदान पन्ना लाल–पँजाब विच संगीत कला दा निकास अते विकास
5. डॉ. कुलदीप–लोकगीतों का विकासात्मक अध्ययन
6. संगीत विषारद
7. डॉ. थिन्द करनैल सिह– लोकयान अते मध्यकालीन पंजाबी साहित्य